Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

शिक्षक की बदलती भूमिका–समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण

डॉ. राजेश कुमार शुक्ला*

* सहायक आचार्य (समाजशास्त्र) श्री किशुन महाविद्यालय, खेजुरी, बलिया (उ.प्र.) भारत

शोध सारांश – शिक्षा समाज के विकास का प्रमुख साधन है और शिक्षक इस प्रक्रिया का केंद्रीय आधार होता है। सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं तकनीकी परिवर्तनों ने शिक्षक की भूमिका को व्यापक रूप से प्रभावित किया है। पारंपरिक समाज में शिक्षक को ज्ञानदाता और अनुशासनकर्ता के रूप में देखा जाता था, जबकि आधुनिक समाज में वह मार्गदर्शक, परामर्शदाता, समाज सुधारक और सामाजिक परिवर्तन के एजेंट के रूप में उभर कर सामने आया है। नवीन शिक्षा नीति 2020 ने शिक्षक की भूमिका को और अधिक बहुआयामी बनाते हुए मूल्य आधारित शिक्षा, बहु–विषयक दृष्टिकोण और तकनीकी दक्षता पर बल दिया है। यह शोध पत्र समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से शिक्षक की बदलती भूमिका का विश्लेषण प्रस्तुत करता है और यह स्पष्ट करता है कि शिक्षक समाज और शिक्षा के बीच सेतु का कार्य करता है।

शिक्षा और समाज का संबंध परस्पर निर्भरता पर आधारित है। समाज अपनी आवश्यकताओं, मूल्यों और संरचना के अनुरूप शिक्षा व्यवस्था का निर्माण करता है, वहीं शिक्षा समाज को दिशा, चेतना और निरंतरता प्रदान करती है। इस अंतर्संबंध में शिक्षक की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। समाजशास्त्र यह मानता है कि शिक्षक केवल पाठ्यवस्तु का संप्रेषक नहीं, बल्कि सामाजिक मूल्यों, सांस्कृतिक विरासत और नैतिक मानकों का संवाहक होता है। जैसे–जैसे समाज में परिवर्तन आता है, वैसे–वैसे शिक्षक की भूमिका, अपेक्षाएँ और उत्तरदायित्व भी बदलते जाते हैं। परंपरागत भारतीय समाज में गुरु–शिष्य परंपरा के अंतर्गत शिक्षक का स्थान अत्यंत सम्मानजनक था। शिक्षा का उद्देश्य चरित्र निर्माण, आत्मानुशासन और सामाजिक स्थिरता था। किंतु औद्योगीकरण, शहरीकरण, वैश्वीकरण, लोकतंत्रीकरण और सूचना–प्रौद्योगिकी के विकास ने समाज की संरचना को बदल दिया। इन परिवर्तनों ने शिक्षा के उद्देश्यों को विस्तार दिया और शिक्षक की भूमिका को अधिक जटिल व बहुआयामी बना दिया।

शब्द कुंजी – शिक्षक, समाजशास्त्र, सामाजिक परिवर्तन, शिक्षा व्यवस्था, नवीन शिक्षा नीति 2020।

प्रस्तावना – शिक्षा को किसी भी समाज की आधारशिला माना जाता है, क्योंकि यह न केवल ज्ञान के संप्रेषण का माध्यम है, बल्कि सामाजिक मूल्यों, सांस्कृतिक परंपराओं और सामूहिक चेतना के निर्माण की प्रक्रिया भी है। समाजशास्त्र के अनुसार शिक्षा समाजीकरण का एक संगठित रूप है, जिसके माध्यम से व्यक्ति समाज के अनुरूप ढलता है। इस संपूर्ण प्रक्रिया में शिक्षक की भूमिका अत्यंत केंद्रीय होती है। शिक्षक वह कड़ी है जो समाज की अपेक्षाओं को शिक्षा के माध्यम से नई पीढ़ी तक पहुँचाता है। इसलिए जब समाज में परिवर्तन होता है, तो शिक्षक की भूमिका भी स्वाभाविक रूप से परिवर्तित होती है। परंपरागत समाजों में शिक्षा का उद्देश्य सामाजिक स्थिरता बनाए रखना, परंपराओं का संरक्षण करना और सामाजिक अनुशासन को सुदृढ़ करना था। उस समय शिक्षक को ज्ञान का एकमात्र स्रोत माना जाता था और उसकी सामाजिक स्थिति अत्यंत सम्मानजनक होती थी। भारतीय समाज में गुरु–शिष्य परंपरा इसका उत्कृष्ट उदाहरण है, जहाँ शिक्षक को केवल शैक्षणिक मार्गदर्शक नहीं बल्कि नैतिक, आध्यात्मिक और सामाजिक पथप्रदर्शक माना जाता था। गुरु का कार्य केवल पाठ पढ़ाना नहीं था, बल्कि शिष्य के संपूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण करना था।

किन्तु आधुनिक युग में सामाजिक संरचना में व्यापक परिवर्तन आए हैं। औद्योगीकरण ने उत्पादन के साधनों को बदला, शहरीकरण ने पारिवारिक और सामुदायिक जीवन को प्रभावित किया, वैश्वीकरण ने सांस्कृतिक सीमाओं को धुंधला किया और सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी ने ज्ञान की प्रकृति को पूरी तरह बदल दिया। इन सभी परिवर्तनों का सीधा प्रभाव शिक्षा व्यवस्था पर पड़ा है। शिक्षा अब केवल संस्कारों के संरक्षण का माध्यम नहीं रह गई है, बल्कि वह सामाजिक गतिशीलता, आर्थिक विकास और व्यक्तिगत उन्नति का प्रमुख साधन बन गई है। इस बदले हुए परिदृश्य में शिक्षक की भूमिका पहले से कहीं अधिक जटिल, उत्तरदायित्वपूर्ण और बहुआयामी हो गई है।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से शिक्षक की भूमिका का अध्ययन इसलिए महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि शिक्षक समाज और शिक्षा के बीच सेतु का कार्य करता है। शिक्षक न केवल पाठ्यक्रम को लागू करता है, बल्कि वह समाज के मूल्यों, विचारधाराओं और सत्ता संरचनाओं से भी प्रभावित होता है। एमिल दुर्खाइम ने शिक्षक को समाज का प्रतिनिधि माना है, जो सामाजिक नैतिकता और सामूहिक चेतना को विद्यार्थियों में विकसित करता है। वहीं पाउलो फ्रेरे शिक्षक को सामाजिक परिवर्तन का सक्रिय एजेंट मानते हैं, जो शिक्षा के माध्यम से दमन और असमानता के विरुद्ध चेतना उत्पन्न करता है।

वर्तमान समय में नवीन शिक्षा नीति 2020 ने शिक्षक की भूमिका को और अधिक केंद्र में ला दिया है। नीति यह स्वीकार करती है कि किसी भी शिक्षा व्यवस्था की सफलता शिक्षकों की गुणवत्ता, दृष्टिकोण और प्रशिक्षण पर निर्भर करती है। बहु–विषयक शिक्षा, कौशल विकास, मूल्य आधारित

शिक्षा और तकनीकी दक्षता जैसे लक्ष्यों की प्राप्ति तभी संभव है जब शिक्षक अपनी पारंपरिक भूमिका से आगे बढ़कर एक नवाचारी, संवेदनशील और सामाजिक रूप से जागरूक भूमिका निभाए। वर्तमान समय में शिक्षा व्यवस्था तीव्र परिवर्तन के दौर से गुजर रही है। नवीन शिक्षा नीति 2020 ने शिक्षण-अधिगम की प्रकृति, पाठ्यक्रम, मूल्यांकन और शिक्षक-प्रशिक्षण में व्यापक बदलाव प्रस्तावित किए हैं। डिजिटल शिक्षा, ऑनलाइन मंचों और बहु-विषयक अध्ययन ने शिक्षक से नई दक्षताओं की अपेक्षा बढ़ा दी है। समाज में बढ़ती असमानता, बेरोजगारी, नैतिक मूल्यों का क्षरण और सामाजिक तनाव जैसी समस्याओं के समाधान में शिक्षक की भूमिका निर्णायक हो सकती है। इसलिए समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से शिक्षक की बदलती भूमिका का अध्ययन आवश्यक और प्रासंगिक है। प्रस्तुत शोध अध्ययन के उद्देश्य निम्नलिखित है :-

1. शिक्षक की पारंपरिक भूमिका का समाजशास्त्रीय विश्लेषण करना।
2. सामाजिक परिवर्तन के संदर्भ में शिक्षक की बदलती भूमिका का अध्ययन करना।
3. नवीन शिक्षा नीति 2020 के परिप्रेक्ष्य में शिक्षक की भूमिका को समझना।
4. आधुनिक समाज में शिक्षक की नई सामाजिक जिम्मेदारियों का विश्लेषण करना।

प्रस्तुत शोध अध्ययन वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध पद्धति पर आधारित है। इसमें द्वितीयक स्रोतों - पुस्तकें, शोध-पत्र, सरकारी दस्तावेज (NEP-2020), पत्र-पत्रिकाएँ और शैक्षणिक रिपोर्ट का उपयोग किया गया है। समाजशास्त्रीय सिद्धांतों के आलोक में तथ्यों का विश्लेषण किया गया है।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से शिक्षा और शिक्षक – समाजशास्त्र शिक्षा को एक सामाजिक संस्था के रूप में देखता है, जिसका कार्य समाज की निरंतरता और परिवर्तन दोनों को संतुलित करना होता है। शिक्षा समाज के मूल्यों को संरक्षित भी करती है और नई परिस्थितियों के अनुरूप उनमें परिवर्तन भी लाती है। इस द्वैत भूमिका को निभाने में शिक्षक की भूमिका निर्णायक होती है। शिक्षक यह तय करता है कि कौन-से मूल्य आगे बढ़ाए जाएँ और किन पर पुनर्विचार किया जाए।

कार्यात्मकतावादी दृष्टिकोण के अनुसार शिक्षक सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। दुर्खाइम और पार्सन्स के अनुसार विद्यालय समाज का लघु रूप होता है, जहाँ शिक्षक सामाजिक अनुशासन, सहयोग और दायित्व की भावना विकसित करता है। इस दृष्टिकोण में शिक्षक सामाजिक स्थिरता का संरक्षक होता है। इसके विपरीत संघर्ष सिद्धांत शिक्षक की भूमिका को सत्ता और असमानता के संदर्भ में देखता है। कार्ल मार्क्स से प्रेरित समाजशास्त्री मानते हैं कि शिक्षा और शिक्षक अक्सर प्रभुत्वशाली वर्ग की विचारधारा को आगे बढ़ाते हैं। ऐसे में शिक्षक की भूमिका केवल ज्ञानदाता की नहीं, बल्कि सामाजिक संरचना को बनाए रखने या बदलने वाले कारक की भी होती है।

आधुनिक आलोचनात्मक समाजशास्त्र शिक्षक को सामाजिक परिवर्तन का माध्यम मानता है। पाउलो फ्रेरे का मानना है कि यदि शिक्षक संवादात्मक और चेतनापरक शिक्षा अपनाए, तो वह विद्यार्थियों को केवल ज्ञान नहीं, बल्कि सामाजिक अन्याय के विरुद्ध सोचने की क्षमता भी दे सकता है। इस प्रकार शिक्षक की भूमिका केवल शैक्षणिक नहीं, बल्कि गहराई से सामाजिक और राजनीतिक भी हो जाती है।

शिक्षक की भूमिका में परिवर्तन के सामाजिक कारण – शिक्षक की भूमिका में आए परिवर्तन आकस्मिक नहीं हैं, बल्कि वे व्यापक सामाजिक परिवर्तनों का परिणाम हैं। औद्योगीकरण ने शिक्षा को रोजगार से जोड़ा, जिसके कारण शिक्षक से व्यावहारिक और कौशल आधारित ज्ञान देने की अपेक्षा बढ़ी। शहरीकरण ने पारिवारिक संरचना को बदला, जिससे विद्यालय और शिक्षक पर समाजीकरण की अधिक जिम्मेदारी आ गई। पहले जो कार्य परिवार और समुदाय करते थे, अब उनका एक बड़ा भाग शिक्षक को निभाना पड़ रहा है।

वैश्वीकरण और तकनीकी क्रांति ने ज्ञान के स्रोतों को विविध बना दिया है। अब शिक्षक ज्ञान का एकमात्र स्रोत नहीं रह गया है। इंटरनेट, डिजिटल प्लेटफॉर्म और ऑनलाइन संसाधनों ने शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया को बदल दिया है। इस स्थिति में शिक्षक की भूमिका सूचना प्रदाता से बदलकर सूचना मार्गदर्शक की हो गई है। शिक्षक अब यह सिखाता है कि ज्ञान को कैसे समझा जाए, उसका आलोचनात्मक विश्लेषण कैसे किया जाए और उसका सामाजिक उपयोग कैसे हो।

सामाजिक चेतना में आए परिवर्तन ने भी शिक्षक की भूमिका को प्रभावित किया है। आज समाज में लैंगिक समानता, सामाजिक न्याय, मानवाधिकार और समावेशन जैसे मुद्दों पर अधिक जोर दिया जा रहा है। इन मूल्यों को विद्यार्थियों में विकसित करने की जिम्मेदारी भी शिक्षक पर आ गई है। इस प्रकार शिक्षक केवल विषय विशेषज्ञ नहीं, बल्कि सामाजिक मूल्यों का सक्रिय संवाहक बन गया है।

वर्तमान सामाजिक परिदृश्य में शिक्षक की भूमिका का समाजशास्त्रीय अध्ययन अत्यंत आवश्यक हो गया है। आज शिक्षा से समाज को अनेक अपेक्षाएँ हैं रोजगार सृजन, सामाजिक समानता, नैतिक मूल्यों का विकास और लोकतांत्रिक चेतना का निर्माण। इन सभी अपेक्षाओं की पूर्ति शिक्षक के माध्यम से ही संभव है। यदि शिक्षक की भूमिका को केवल पाठ्यक्रम तक सीमित कर दिया जाए, तो शिक्षा अपने व्यापक सामाजिक उद्देश्य को पूरा नहीं कर पाएगी।

नवीन शिक्षा नीति 2020 ने शिक्षक को शिक्षा सुधार की धुरी माना है। नीति में शिक्षक प्रशिक्षण, निरंतर व्यावसायिक विकास और अकादमिक स्वतंत्रता पर विशेष बल दिया गया है। इन प्रावधानों के सामाजिक निहितार्थों को समझने के लिए समाजशास्त्रीय अध्ययन आवश्यक है। यह शोध न केवल शैक्षणिक दृष्टि से, बल्कि नीति-निर्माण और शिक्षक-प्रशिक्षण के लिए भी उपयोगी सिद्ध हो सकता है। इसके अतिरिक्त, भारतीय समाज विविधताओं से भरा हुआ हैकृजाति, वर्ग, लिंग, धर्म और क्षेत्रीय असमानताएँ शिक्षा को गहराई से प्रभावित करती हैं। शिक्षक इन असमानताओं के बीच कार्य करता है और कई बार उनके प्रभाव को कम करने का प्रयास भी करता है। इसलिए शिक्षक की भूमिका का अध्ययन सामाजिक न्याय और समावेशन के दृष्टिकोण से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है।

पारंपरिक समाज की सामाजिक संरचना और शिक्षा – पारंपरिक समाज सामान्यत: स्थिर सामाजिक संरचना, स्पष्ट सामाजिक भूमिकाओं और मजबूत सांस्कृतिक परंपराओं पर आधारित होता है। ऐसे समाजों में सामाजिक परिवर्तन की गति धीमी होती है और पीढ़ी-दर-पीढ़ी सामाजिक मूल्यों, मान्यताओं और आचारों का हस्तांतरण अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है। समाजशास्त्र के अनुसार इस हस्तांतरण की प्रक्रिया को समाजीकरण कहा

जाता है। शिक्षा, विशेष रूप से औपचारिक और अनौपचारिक दोनों रूपों में, समाजीकरण का एक प्रमुख माध्यम रही है। इस प्रक्रिया में शिक्षक की भूमिका अत्यंत केंद्रीय होती है, क्योंकि वही समाज के स्वीकृत मूल्यों और व्यवहार प्रतिमानों को नई पीढ़ी तक पहुँचाता है।

पारंपरिक समाजों में शिक्षा का उद्देश्य मुख्यत: सामाजिक स्थिरता बनाए रखना था। शिक्षा के माध्यम से यह सुनिश्चित किया जाता था कि व्यक्ति समाज द्वारा निर्धारित भूमिकाओं को स्वीकार करे और उनका पालन करे। ऐसे समाजों में शिक्षक सामाजिक व्यवस्था का प्रतिनिधि होता था, जो समाज के नियमों, नैतिकताओं और सांस्कृतिक प्रतीकों को विद्यार्थियों में अंत:स्थापित करता था। इस दृष्टि से शिक्षक केवल शैक्षणिक नहीं, बल्कि सामाजिक और नैतिक सत्ता का भी प्रतीक था।

गुरु-शिष्य परंपरा – भारतीय संदर्भ – भारतीय समाज में गुरु-शिष्य परंपरा पारंपरिक शिक्षा व्यवस्था का आधार रही है। इस परंपरा में शिक्षक को केवल ज्ञानदाता नहीं, बल्कि जीवन-पथ प्रदर्शक माना गया है। गुरु का कार्य शिष्य के बौद्धिक विकास के साथ-साथ उसके नैतिक, चारित्रिक और आध्यात्मिक विकास को सुनिश्चित करना था। उपनिषदों और प्राचीन ग्रंथों में गुरु को समाज का मार्गदर्शक और संस्कृति का संरक्षक माना गया है। गुरु-शिष्य संबंध अत्यंत घनिष्ठ और व्यक्तिगत होता था। शिक्षा आश्रमों, गुरुकुलों और धार्मिक संस्थानों के माध्यम से दी जाती थी, जहाँ शिक्षक और शिष्य का जीवन एक-दूसरे से गहराई से जुड़ा होता था। समाजशास्त्रीय दृष्टि से यह व्यवस्था सामाजिक नियंत्रण और मूल्य-संप्रेषण का प्रभावी माध्यम थी। शिक्षक के माध्यम से समाज के आदर्श, कर्तव्यबोध और अनुशासन की भावना शिष्य के व्यक्तित्व में समाहित की जाती थी।

इस परंपरा में शिक्षक का अधिकार निर्विवाद होता था। शिक्षक द्वारा दिए गए निर्देशों को सामाजिक और नैतिक मान्यता प्राप्त होती थी। यह स्थिति समाज में स्थिरता बनाए रखने में सहायक थी, किंतु साथ ही यह परिवर्तन और आलोचनात्मक सोच की संभावनाओं को सीमित भी करती थी। समाजशास्त्र इस बिंदु पर यह स्पष्ट करता है कि पारंपरिक समाज में शिक्षक की भूमिका परिवर्तनकारी से अधिक संरक्षकात्मक थी।

शिक्षक और सामाजिक नियंत्रण – समाजशास्त्र में सामाजिक नियंत्रण का अर्थ उन प्रक्रियाओं से है जिनके माध्यम से समाज अपने सदस्यों के व्यवहार को नियंत्रित करता है। शिक्षा और शिक्षक इस नियंत्रण के महत्वपूर्ण साधन रहे हैं। पारंपरिक समाज में शिक्षक विद्यार्थियों को समाज के स्वीकृत व्यवहार प्रतिमानों के अनुरूप ढालने का कार्य करता था। अनुशासन, आज्ञाकारिता, कर्तव्य और नैतिकता जैसे मूल्य शिक्षा के केंद्र में होते थे।

एमिल दुर्खाइम के अनुसार शिक्षा समाज की सामूहिक चेतना को व्यक्ति में स्थापित करने की प्रक्रिया है। शिक्षक इस सामूहिक चेतना का प्रतिनिधि होता है। विद्यालय को दुर्खाइम ने नैतिक प्रशिक्षण का केंद्र माना, जहाँ शिक्षक के माध्यम से सामाजिक नियमों और मूल्यों का संचार होता है। इस दृष्टिकोण में शिक्षक सामाजिक नियंत्रण का वैध और आवश्यक माध्यम बन जाता है।

भारतीय संदर्भ में शिक्षक द्वारा दिया गया नैतिक प्रशिक्षण व्यक्ति को उसके सामाजिक स्थान और भूमिका से परिचित कराता था। जाति, वर्ग और लिंग आधारित भूमिकाएँ शिक्षा के माध्यम से ही मजबूत होती थीं। इस कारण शिक्षक अनजाने में सामाजिक असमानताओं को बनाए रखने में भी भूमिका निभाता था। समाजशास्त्रीय विश्लेषण यह दर्शाता है कि पारंपरिक समाज में शिक्षक की भूमिका सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने में अत्यंत प्रभावी थी, किंतु सामाजिक परिवर्तन की दृष्टि से सीमित थी।

शिक्षा, संस्कृति और शिक्षक – संस्कृति किसी भी समाज की आत्मा होती है और शिक्षा संस्कृति के संरक्षण तथा संवर्धन का प्रमुख माध्यम होती है। पारंपरिक समाजों में शिक्षक को संस्कृति का संरक्षक माना जाता था। भाषा, साहित्य, धार्मिक विश्वास, रीति-रिवाज और सामाजिक परंपराएँ शिक्षक के माध्यम से नई पीढ़ी तक पहुँचती थीं। शिक्षक यह तय करता था कि कौन-से सांस्कृतिक तत्व संरक्षित किए जाएँ और किन्हें त्याग दिया जाए।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से यह भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण थी, क्योंकि संस्कृति ही समाज की पहचान को बनाए रखती है। शिक्षक द्वारा दी गई शिक्षा समाज में एकरूपता और सामूहिकता की भावना को मजबूत करती थी। किंतु इसी प्रक्रिया में नवाचार और आलोचनात्मक दृष्टि को सीमित कर दिया जाता था। शिक्षा का उद्देश्य समाज को बदलना नहीं, बल्कि उसे यथास्थिति में बनाए रखना था। इस संदर्भ में शिक्षक का सामाजिक प्रभाव अत्यंत व्यापक था। शिक्षक के विचार, मूल्य और दृष्टिकोण विद्यार्थियों के माध्यम से पूरे समाज में प्रसारित होते थे। इस प्रकार शिक्षक सामाजिक संरचना का एक शक्तिशाली घटक बन जाता था।

पारंपरिक शिक्षक की सीमाएँ: समाजशास्त्रीय आलोचना – यद्यपि पारंपरिक समाज में शिक्षक को अत्यंत सम्मान प्राप्त था, फिर भी समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से उसकी भूमिका की कुछ सीमाएँ भी थीं। शिक्षक अक्सर सामाजिक असमानताओं जैसे जाति व्यवस्था, लिंग भेद और वर्गीय विभाजनकृको चुनौती देने के बजाय उन्हें स्वाभाविक मानकर स्वीकार करता था। शिक्षा के माध्यम से सामाजिक गतिशीलता की संभावना सीमित थी और अधिकांशत: शिक्षा प्रभुत्वशाली वर्गों तक ही सीमित रहती थी।

संघर्ष सिद्धांत के अनुसार पारंपरिक शिक्षक व्यवस्था सामाजिक सत्ता संरचनाओं को बनाए रखने में सहायक थी। शिक्षक द्वारा दिया गया ज्ञान तटस्थ न होकर सामाजिक और सांस्कृतिक रूप से पक्षपाती होता था। इस दृष्टि से शिक्षक सामाजिक परिवर्तन का नहीं, बल्कि सामाजिक यथास्थिति का संरक्षक था।

इन सीमाओं के बावजूद यह स्वीकार करना आवश्यक है कि पारंपरिक समाज में शिक्षक ने सामाजिक एकता, नैतिकता और सांस्कृतिक निरंतरता बनाए रखने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। आधुनिक समाज में शिक्षक की बदलती भूमिका को समझने के लिए पारंपरिक भूमिका की इन विशेषताओं और सीमाओं को जानना आवश्यक है।

सामाजिक परिवर्तन की अवधारणा और शिक्षा – समाजशास्त्र में सामाजिक परिवर्तन का अर्थ समाज की संरचना, संस्थाओं, मूल्यों और व्यवहार प्रतिमानों में होने वाले दीर्घकालिक परिवर्तनों से है। औद्योगीकरण, शहरीकरण, आधुनिकीकरण और वैश्वीकरण जैसे कारकों ने समाज को गहराई से प्रभावित किया है। इन परिवर्तनों का प्रभाव केवल आर्थिक और सामाजिक संरचना तक सीमित नहीं रहा, बल्कि शिक्षा व्यवस्था और शिक्षक की भूमिका में भी व्यापक बदलाव देखने को मिले हैं। पारंपरिक समाज में जहाँ शिक्षा स्थिरता और सांस्कृतिक निरंतरता पर केंद्रित थी, वहीं बदलते समाज में शिक्षा सामाजिक गतिशीलता और परिवर्तन का माध्यम बन गई।

सामाजिक परिवर्तन के साथ शिक्षा का उद्देश्य भी बदल गया। अब शिक्षा का लक्ष्य केवल परंपराओं का संरक्षण नहीं, बल्कि व्यक्ति को नए सामाजिक, आर्थिक और तकनीकी परिवेश के अनुरूप तैयार करना हो गया।

इस परिवर्तनशील संदर्भ में शिक्षक की भूमिका भी पुनर्परिभाषित हुई। शिक्षक अब केवल ज्ञान का स्रोत नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन का सक्रिय सहभागी बन गया।

औद्योगीकरण और शिक्षा व्यवस्था पर उसका प्रभाव – औद्योगीकरण ने समाज की उत्पादन प्रणाली, श्रम संरचना और जीवन शैली में व्यापक परिवर्तन किए। कृषि आधारित समाज से औद्योगिक समाज की ओर संक्रमण ने शिक्षा की आवश्यकता और स्वरूप दोनों को बदल दिया। औद्योगिक समाज में कुशल श्रमिकों, तकनीकी ज्ञान और औपचारिक प्रशिक्षण की आवश्यकता बढ़ी। इस आवश्यकता ने विद्यालयों, महाविद्यालयों और तकनीकी संस्थानों के विस्तार को प्रोत्साहित किया। इस संदर्भ में शिक्षक की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई। शिक्षक को अब केवल नैतिक और सांस्कृतिक मूल्य सिखाने तक सीमित नहीं रखा गया, बल्कि उसे व्यावसायिक कौशल, वैज्ञानिक दृष्टिकोण और तकनीकी ज्ञान प्रदान करने वाला माना गया। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से यह परिवर्तन शिक्षक की भूमिका को अधिक व्यावहारिक और उपयोगितावादी बनाता है।

औद्योगीकरण के साथ समय अनुशासन, कार्य संस्कृति और प्रतिस्पर्धा जैसे नए मूल्य शिक्षा के माध्यम से समाज में स्थापित किए गए। शिक्षक इन मूल्यों का वाहक बना। विद्यालय एक ऐसी संस्था के रूप में विकसित हुआ जो औद्योगिक समाज के लिए आवश्यक मानव संसाधन तैयार करती है। इस प्रक्रिया में शिक्षक सामाजिक परिवर्तन का उपकरण बन गया।

शहरीकरण और शिक्षक-छात्र संबंधों में बदलाव – शहरीकरण सामाजिक परिवर्तन का एक प्रमुख आयाम है, जिसने पारंपरिक सामुदायिक संबंधों को कमजोर और औपचारिक संबंधों को मजबूत किया। ग्रामीण समाज में शिक्षक और विद्यार्थी के बीच व्यक्तिगत और भावनात्मक संबंध होते थे, जबकि शहरी समाज में शिक्षा अधिक औपचारिक और संस्थागत हो गई। शहरी विद्यालयों में छात्रों की संख्या अधिक, पृष्ठभूमि विविध और प्रतिस्पर्धा तीव्र होती है। इस स्थिति में शिक्षक का कार्य केवल ज्ञान प्रदान करना नहीं, बल्कि विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक पृष्ठभूमि से आए विद्यार्थियों को समान अवसर प्रदान करना भी होता है। शिक्षक को समावेशी दृष्टिकोण अपनाना पड़ता है, जो समाजशास्त्रीय दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है।

शहरीकरण ने शिक्षक की भूमिका को अधिक पेशेवर बना दिया। शिक्षक अब भावनात्मक गुरु से अधिक प्रशिक्षित पेशेवर के रूप में देखा जाने लगा। इस परिवर्तन ने शिक्षक की सामाजिक प्रतिष्ठा और उत्तरदायित्व दोनों को प्रभावित किया।

आधुनिकीकरण, तर्कशीलता और शिक्षक – आधुनिकीकरण की प्रक्रिया ने समाज में तर्कशीलता, वैज्ञानिक दृष्टिकोण और व्यक्तिगत उपलब्धि पर बल दिया। शिक्षा को अब परंपरा के स्थान पर तर्क, अनुभव और प्रयोग पर आधारित माना गया। इस परिवर्तन का सीधा प्रभाव शिक्षक की भूमिका पर पड़ा। आधुनिक समाज में शिक्षक को छात्रों में आलोचनात्मक सोच, समस्या समाधान क्षमता और वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करने की अपेक्षा की जाती है। शिक्षक अब केवल पाठ्यपुस्तक का व्याख्याता नहीं, बल्कि सीखने की प्रक्रिया का मार्गदर्शक बन गया है। समाजशास्त्रीय रूप से यह भूमिका व्यक्ति को सक्रिय नागरिक बनाने में सहायक होती है।

इस प्रक्रिया में शिक्षक को सामाजिक परिवर्तन का एजेंट माना जा सकता है। शिक्षक छात्रों को केवल मौजूदा सामाजिक व्यवस्था को स्वीकार करना नहीं सिखाता, बल्कि उसे समझने और आवश्यक होने पर बदलने की क्षमता भी प्रदान करता है। यह भूमिका पारंपरिक समाज के शिक्षक से मूलत: भिन्न है।

शिक्षा और सामाजिक गतिशीलता में शिक्षक की भूमिका – औद्योगीकरण और शहरीकरण के साथ शिक्षा सामाजिक गतिशीलता का एक प्रमुख माध्यम बन गई। शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति अपनी सामाजिक और आर्थिक स्थिति में सुधार कर सकता है। इस प्रक्रिया में शिक्षक की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि वही छात्रों को अवसरों से परिचित कराता है और उनकी क्षमताओं को विकसित करता है।

कार्यात्मक सिद्धांत के अनुसार शिक्षा समाज में योग्य व्यक्तियों का चयन और वितरण करती है। शिक्षक इस चयन प्रक्रिया का महत्वपूर्ण हिस्सा होता है। किंतु संघर्ष सिद्धांत यह तर्क देता है कि शिक्षा प्रणाली अक्सर सामाजिक असमानताओं को पुन: उत्पन्न करती है। शिक्षक, चाहे अनजाने में ही क्यों न हो, इस प्रक्रिया में भूमिका निभा सकता है।

इस द्वंद्वात्मक स्थिति में शिक्षक की सामाजिक जिम्मेदारी बढ़ जाती है। उसे केवल पाठ्यक्रम पूरा करने तक सीमित नहीं रहना चाहिए, बल्कि सामाजिक न्याय, समानता और अवसर की भावना को भी बढ़ावा देना चाहिए।

वैश्वीकरण और शिक्षा का बदलता स्वरूप – वैश्वीकरण आधुनिक समाज का एक महत्वपूर्ण आयाम है, जिसने आर्थिक, सांस्कृतिक और शैक्षिक संरचनाओं को गहराई से प्रभावित किया है। वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप ज्ञान की सीमाएँ राष्ट्रीय दायरों से बाहर निकलकर अंतरराष्ट्रीय स्तर तक विस्तृत हो गई हैं। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के विकास ने शिक्षा को वैश्विक मंच से जोड़ दिया है। इस संदर्भ में शिक्षक की भूमिका भी स्थानीय सीमाओं से आगे बढ़कर वैश्विक दृष्टिकोण वाली हो गई है।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से वैश्वीकरण ने शिक्षा को प्रतिस्पर्धात्मक, बाजारोन्मुख और कौशल-आधारित बना दिया है। शिक्षक को अब केवल पाठ्यक्रम आधारित ज्ञान प्रदान करने वाला नहीं, बल्कि छात्रों को वैश्विक नागरिक के रूप में तैयार करने वाला माना जाता है। भाषा दक्षता, अंतर-सांस्कृतिक समझ, डिजिटल साक्षरता और आजीवन सीखने की प्रवृत्ति जैसे गुणों का विकास शिक्षक की प्रमुख जिम्मेदारी बन गया है।

नवीन शिक्षा नीति (NEP 2020) और शिक्षक की भूमिका – भारत की नवीन शिक्षा नीति 2020 ने शिक्षा व्यवस्था में संरचनात्मक और वैचारिक दोनों स्तरों पर परिवर्तन का प्रयास किया है। इस नीति का प्रमुख उद्देश्य शिक्षा को समावेशी, बहु-विषयक और कौशल-उन्मुख बनाना है। समाजशास्त्रीय दृष्टि से यह नीति शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन और सामाजिक न्याय का माध्यम बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

नवीन शिक्षा नीति में शिक्षक को शिक्षा प्रणाली का केंद्रबिंदु माना गया है। शिक्षक की भूमिका अब केवल पाठ्यपुस्तक आधारित शिक्षण तक सीमित नहीं है, बल्कि उसे नवाचार, अनुसंधान और रचनात्मकता को प्रोत्साहित करने वाला मार्गदर्शक माना गया है। नीति में शिक्षक प्रशिक्षण, सतत व्यावसायिक विकास और अकादमिक स्वायत्तता पर विशेष बल दिया गया है, जिससे शिक्षक की सामाजिक और पेशेवर प्रतिष्ठा को सुदृढ़ किया जा सके।

डिजिटल शिक्षा और शिक्षक – डिजिटल तकनीक के विस्तार ने शिक्षा के स्वरूप को पूरी तरह बदल दिया है। ऑनलाइन कक्षाएँ, ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और ओपन एजुकेशनल रिसोर्सेज ने शिक्षण-

अधिगम प्रक्रिया को अधिक लचीला और सुलभ बनाया है। इस डिजिटल परिवेश में शिक्षक की भूमिका भी पुनर्परिभाषित हुई है। शिक्षक अब केवल ज्ञान का प्रदाता नहीं, बल्कि सीखने की प्रक्रिया का डिजाइनर और सुविधादाता बन गया है। समाजशास्त्रीय रूप से यह परिवर्तन शिक्षक और छात्र के बीच संबंधों को अधिक लोकतांत्रिक बनाता है। छात्र अब निष्क्रिय ग्रहणकर्ता नहीं, बल्कि सक्रिय सहभागी बनते हैं। किंतु इसके साथ ही डिजिटल विभाजन की समस्या भी उभरकर सामने आती है, जहाँ सभी छात्रों को समान तकनीकी संसाधन उपलब्ध नहीं होते। इस स्थिति में शिक्षक की भूमिका सामाजिक समता सुनिश्चित करने की दिशा में और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है।

समावेशी शिक्षा और सामाजिक न्याय – समकालीन समाज में शिक्षा से यह अपेक्षा की जाती है कि वह सामाजिक असमानताओं को कम करने में सहायक हो। नवीन शिक्षा नीति और वैश्विक शैक्षिक विमर्श में समावेशी शिक्षा पर विशेष बल दिया गया है। जाति, वर्ग, लिंग, दिव्यांगता और क्षेत्रीय असमानताओं को ध्यान में रखते हुए शिक्षा को सभी के लिए सुलभ बनाने का लक्ष्य रखा गया है। इस संदर्भ में शिक्षक सामाजिक न्याय का वाहक बन जाता है। शिक्षक को संवेदनशील, जागरूक और निष्पक्ष भूमिका निभानी होती है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से शिक्षक का यह दायित्व केवल शैक्षिक नहीं, बल्कि सामाजिक और नैतिक भी है। शिक्षक यदि समावेशी दृष्टिकोण अपनाता है, तो शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का सशक्त माध्यम बन सकती है।

शिक्षक की बढ़ती चुनौतियाँ – समकालीन समाज में शिक्षक की भूमिका जितनी व्यापक हुई है, उतनी ही उसकी चुनौतियाँ भी बढ़ी हैं। बढ़ती प्रतिस्पर्धा, प्रदर्शन आधारित मूल्यांकन, प्रशासनिक दबाव और तकनीकी अपेक्षाएँ शिक्षक के कार्य को जटिल बना देती हैं। इसके अतिरिक्त, समाज में मूल्यों के परिवर्तन और पारिवारिक संरचना में बदलाव का प्रभाव भी शिक्षक–छात्र संबंधों पर पड़ता है।

समाजशास्त्रीय विश्लेषण यह दर्शाता है कि शिक्षक अब केवल शिक्षण तक सीमित नहीं है, बल्कि उसे परामर्शदाता, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक मार्गदर्शक की भूमिका भी निभानी पड़ती है। यह बहुआयामी भूमिका शिक्षक के पेशे को अत्यंत महत्वपूर्ण, किंतु चुनौतीपूर्ण भी बनाती है।

प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि शिक्षक की भूमिका किसी एक समय या समाज तक सीमित नहीं रही है, बल्कि सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक मूल्य, आर्थिक व्यवस्था और राजनीतिक नीतियों के साथ निरंतर परिवर्तित होती रही है। पारंपरिक समाज में शिक्षक को सामाजिक स्थिरता, सांस्कृतिक संरक्षण और नैतिक अनुशासन का वाहक माना जाता था। गुरु–शिष्य परंपरा में शिक्षक का स्थान अत्यंत सम्मानजनक और सत्ता–संपन्न था, जहाँ उसका उद्देश्य समाज की स्थापित व्यवस्था को अगली पीढ़ी तक हस्तांतरित करना था।

औद्योगीकरण, शहरीकरण और आधुनिकीकरण की प्रक्रियाओं ने शिक्षा के उद्देश्य और स्वरूप दोनों को बदल दिया। शिक्षक अब केवल परंपराओं का संरक्षक नहीं रहा, बल्कि उसे व्यावसायिक कौशल, वैज्ञानिक दृष्टिकोण और सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा देने वाला माना गया। समाजशास्त्रीय दृष्टि से यह परिवर्तन शिक्षक को सामाजिक परिवर्तन के एक महत्वपूर्ण एजेंट के रूप में स्थापित करता है।

समकालीन वैश्वीकृत और डिजिटल समाज में शिक्षक की भूमिका और भी जटिल तथा बहुआयामी हो गई है। नवीन शिक्षा नीति 2020 ने शिक्षक को शिक्षा व्यवस्था का केंद्र मानते हुए उसकी पेशेवर क्षमता, स्वायत्तता और प्रशिक्षण पर विशेष बल दिया है। शिक्षक अब ज्ञान का एकमात्र स्रोत नहीं, बल्कि सीखने की प्रक्रिया का मार्गदर्शक, सह–निर्माता और सामाजिक न्याय का संवाहक बन गया है।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से शिक्षक की भूमिका का मूल्यांकन – कार्यात्मक सिद्धांत के अनुसार शिक्षक समाज में संतुलन और एकीकरण बनाए रखने में सहायक होता है। शिक्षा के माध्यम से शिक्षक सामाजिक मूल्यों, मानदंडों और कौशलों का संचार करता है, जिससे समाज की निरंतरता बनी रहती है। वहीं संघर्ष सिद्धांत यह इंगित करता है कि शिक्षा और शिक्षक कभी–कभी सामाजिक असमानताओं को पुन: उत्पन्न करने में भी भूमिका निभाते हैं। पाठ्यक्रम, मूल्यांकन प्रणाली और संस्थागत ढाँचे अक्सर प्रभुत्वशाली वर्गों के हितों को प्रतिबिंबित करते हैं।

प्रतीकात्मक अंत:क्रियावाद के अनुसार शिक्षक और छात्र के बीच दैनिक अंत:क्रियाएँ छात्र की आत्म–छवि, आकांक्षाओं और सामाजिक पहचान को आकार देती हैं। इस दृष्टि से शिक्षक की भूमिका केवल संरचनात्मक नहीं, बल्कि सूक्ष्म सामाजिक स्तर पर भी अत्यंत प्रभावशाली है। इन सभी दृष्टिकोणों से यह स्पष्ट होता है कि शिक्षक की भूमिका समाज के स्वरूप के साथ गहराई से जुड़ी हुई है।

शिक्षक के समक्ष समकालीन चुनौतियाँ – आज के समाज में शिक्षक को अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। तकनीकी परिवर्तन की तीव्र गति, ऑनलाइन शिक्षा का विस्तार, बढ़ती प्रतिस्पर्धा, प्रदर्शन–आधारित मूल्यांकन और प्रशासनिक दबाव शिक्षक की भूमिका को तनावपूर्ण बनाते हैं। इसके अतिरिक्त, सामाजिक असमानता, डिजिटल विभाजन और विद्यार्थियों की विविध सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि शिक्षक के कार्य को और जटिल बना देती है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से यह आवश्यक है कि शिक्षक को केवल व्यक्तिगत स्तर पर नहीं, बल्कि संस्थागत और नीतिगत स्तर पर भी समर्थन दिया जाए। यदि शिक्षक स्वयं असुरक्षित और दबावग्रस्त होगा, तो उससे सामाजिक परिवर्तन की अपेक्षा करना व्यावहारिक नहीं होगा।

सुझाव – इस शोध के आधार पर कुछ महत्वपूर्ण सुझाव प्रस्तुत किए जा सकते हैं।

प्रथम, शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों को अधिक समाजशास्त्रीय और व्यावहारिक बनाया जाना चाहिए, ताकि शिक्षक सामाजिक विविधता और असमानताओं को समझ सके।

द्वितीय, नवीन शिक्षा नीति के अंतर्गत सतत व्यावसायिक विकास को वास्तविक रूप में लागू किया जाना चाहिए, न कि केवल औपचारिकता के रूप में।

तृतीय, डिजिटल शिक्षा के विस्तार के साथ–साथ डिजिटल समानता सुनिश्चित करना आवश्यक है, जिससे सभी विद्यार्थी समान अवसर प्राप्त कर सकें।

चतुर्थ, शिक्षक को पाठ्यक्रम और शिक्षण विधियों में अधिक स्वायत्तता दी जानी चाहिए, ताकि वह स्थानीय सामाजिक आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षा प्रदान कर सके।

पंचम, शिक्षा को सामाजिक न्याय और समावेशन का सशक्त माध्यम बनाने के लिए शिक्षक को संवेदनशील और आलोचनात्मक दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

भविष्य में समाज और शिक्षा दोनों में परिवर्तन की गति और तेज होने की संभावना है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता, वैश्विक नागरिकता और आजीवन अधिगम जैसे विचार शिक्षा के केंद्र में होंगे। ऐसे में शिक्षक की भूमिका और अधिक मार्गदर्शक, सहयोगी और नवाचारी होगी। समाजशास्त्रीय दृष्टि से शिक्षक भविष्य के समाज की संरचना को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

यह आवश्यक है कि शिक्षक को केवल नीति के क्रियान्वयनकर्ता के रूप में नहीं, बल्कि नीति–निर्माण में सहभागी के रूप में भी देखा जाए। तभी शिक्षा वास्तव में सामाजिक परिवर्तन और मानव विकास का सशक्त माध्यम बन सकेगी।

अंततः यह कहा जा सकता है कि शिक्षक की भूमिका स्थिर नहीं, बल्कि समाज के साथ निरंतर विकसित होने वाली प्रक्रिया है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से शिक्षक न केवल शिक्षा प्रणाली का अंग है, बल्कि समाज का संवेदनशील दर्पण और भविष्य का निर्माता भी है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. Apple, M. W. (2013). Education and power (3rd ed.). Routledge.
2. Ballantine, J. H., & Hammack, F. M. (2012). The sociology of education: A systematic analysis (7th ed.). Pearson.
3. Banks, J. A. (2015). Cultural diversity and education: Foundations, curriculum, and teaching (6th ed.). Routledge.
4. Bourdieu, P., & Passeron, J. C. (1990). Reproduction in education, society and culture. Sage Publications.
5. Brint, S. (2006). Schools and societies (2nd ed.). Stanford University Press.
6. Dewey, J. (1916). Democracy and education. Macmillan.
7. Durkheim, É. (1956). Education and sociology. Free Press. (Original work published 1922)
8. Freire, P. (1970). Pedagogy of the oppressed. Continuum.
9. Giddens, A. (2017). Sociology (8th ed.). Polity Press.
10. Giroux, H. A. (2011). On critical pedagogy. Continuum.
11. Government of India. (2020). National Education Policy 2020. Ministry of Human Resource Development.
12. Illich, I. (1971). Deschooling society. Harper & Row.
13. Kumar, K. (2005). Political agenda of education: A study of colonialist and nationalist ideas. Sage Publications.
14. MHRD. (2020). National Education Policy 2020: Implementation guidelines. Government of India.
15. NCERT. (2021). Teacher education and professional development in India. NCERT.
16. Weber, M. (1978). Economy and society. University of California Press.

****